RESEARCH EXPRESSION ISSN 2456-3455 Vol. III, Issue 4 and 5, March and September 2019

इस्लाम धर्म में नारी की स्थिति : एक ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. बन्सो नुरूटी
सहायक प्राध्यापक, इतिहास अध्ययनशाला, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

स्त्री और पुरुष समाजरुपी गाड़ी के दो पहिये के समान हैं, इनमें से अगर कोई कमजोर हो जाए तो समाज का संतुलन बिगड़ जाता है। किसी भी देश, समाज में नारी की स्थिति कैसी है, वह समाज की प्रगति का सूचक है। इस दृष्टि से प्राचीन भारत में नारी की स्थिति श्रेष्ठ कही जा सकती है, उनमें पर्दा प्रथा, बाल विवाह, दहेज जैसी कुप्रथाएँ प्रवेश नहीं की थीं। वे स्वतंत्रतापूर्वक राजनीतिक, सामाजिक कार्य व धर्म–साहित्य के क्षेत्र में हिस्सा लेती थीं।[1] उन्हें शिक्षा भी प्राप्त होती थी। घोषा, लोपा, अपाला, जैसी विदुषी महिलाओं को कौन नहीं जानता।

मध्ययुग में इस्लाम व सिक्ख धर्म का उदय हुआ। दोनों ही धर्मों में नारी को पर्याप्त स्वतंत्रता दिये जाने की बात हुई पर यह व्यवस्था परिस्थिति के अनुकूल नहीं रही। भारत में मुसलमानों के आगमन व भारतीय क्षेत्र में प्रवेश के साथ ही नारी की स्थिति गिरती गई।[2] यह सत्य है कि तुर्क अफगान काल में शाह तुर्कन, रजिया सुल्तान, मलिका–ए–जहाँ, बीबी राजी, बीबी अन्या, कमला देवी तथा देवता देवी जैसी प्रभावशाली व योग्य नारियों का प्रादुर्भाव हुआ।[3] किंतु इस काल में पर्दाप्रथा, बाल विवाह, दहेज सतीप्रथा और जौहर जैसी कुप्रथाएँ समाज में समाविष्ट हो गयीं।

सामान्यतः मध्यकाल में नारी की स्थिति अच्छी नहीं थी। इसके लिए इस्लाम धर्म का अध्ययन करना आवश्यक है।

भारत में धर्म का विकास

धर्म मानव समाज का ऐसा व्यापक, स्थायी और शाश्वत तत्व है जिसको सम्यक् रूप में समझे बिना मानव समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। मानव ने विज्ञान के सहारे अपने पर्यावरण पर काफी नियंत्रण प्राप्त कर लिया, इसका परिणाम यह हुआ, कि वह समाज या तो धर्म–निरपेक्ष या धर्म विरोधी हो गया, पर भारत के संदर्भ में ऐसा नहीं कहा जा सकता। भारत धर्म–निरपेक्ष राज्य होने के बावजूद धर्म विरोधी राज्य नहीं है। टाइडलर महोदय ने आध्यात्मिक विश्वास को ही धर्म कहा है।[4] सर्वविचार यही है कि कोई भी धर्म शाश्वत, अनादि, अनंत नहीं है और न ही कोई सर्वज्ञ, सर्व–शक्तिमान है अगर ऐसा होता तो पूरे विश्व में एक ईश्वर व एक धर्म होता।[5]

वास्तव में धर्म की अवधारणा का विकास मनुष्य के विकास के बाद की अवस्थाओं से हुआ, लगभग चालीस लाख वर्ष पूर्व मनुष्य की उत्पत्ति हुई और लगभग साढ़े पांच हजार वर्ष पूर्व धर्म की स्थापना हुई।[6] आज विश्व में दस–बारह धर्मों में हिन्दू, यहूदी, पारसी, बौद्ध, जैन, ईसाई, इस्लाम और सिक्ख प्रमुख हैं। इनमें सबसे प्राचीन हिन्दू व सबसे नया सिक्ख धर्म है।

इस्लाम धर्म

इस्लाम का शाब्दिक अर्थ–आदेशों का पालन करना, आत्म–समर्पण और आज्ञा पालन करना। वे मनुष्य जो खुदा के आदेशों का नियमानुसार पालन करते हुए अच्छाइयों को अपनाते हैं वे ही मुस्लिम हैं।

इस्लाम धर्म का उदय अरब देश में हुआ। तत्कालीन अरब यद्यपि बड़े ही स्वतंत्रताप्रिय एवं स्वच्छंद थे, फिर भी अज्ञानता से घिरे हुए थे।[7]

आज से लगभग साढ़े चौदह सौ वर्ष पूर्व अरब के शहर मक्का में अपने एक बंदे हजरत मुहम्मद को इस संसार में भेजा। आपका जन्म कुरेश कबीले के बन् हाशिम परिवार में सन् 570 ई. में हुआ। बचपन में ही पिता हजरते अब्दुल्ला, माता हजरते आमना और दादा हजरते अब्दुल मुत्तालबे का साया उठ गया। इस कारण आपकी सांसारिक शिक्षा नहीं हो पायी, जब युवा हुए तो व्यापारियों के काफिले के साथ यात्राएँ भी कीं। आपका जीवन ईमानदारी और सादगीपूर्ण रहा, हमेशा सद्विचार रखा, आपका विवाह विधवा खदीजा से हुआ।[8] मगर खुदा आपको पैगम्बर के रूप में संसार को दिखाना चाहता था, इसलिए आपमें अचानक परिवर्तन आया और आप खुदा की कल्पना में डूब गये।

* Corresponding Author: bansonuruti@gmail.com • 9755953190

खुदा ने एक फरिश्ता (हजरत जिबरईल) के माध्यम से अपना संदेश पहुँचाया। इस क्रिया को 'वही' कहा गया। इस प्रकार आप तक जो संदेश व आदेश आते रहे आप उन्हें 'कलाम–ए–इलाही' के रूप में लोगों तक पहुंचाया।[9] यही 'कलाम–ए–इलाही' बाद में 'कुरआन मजीद' के रूप में पेश किया गया।

हजरत मुहम्मद फरमा रहे थे–"लाईलाहा इल्लल्लाह मुहम्मदर रसूलुल्लाह" अर्थात् अल्लाह के सिवा कोई ऐसा नहीं जिसकी इबादत की जाए और मुहम्मद उसके रसूल हैं।[10]

इस्लाम की मुख्य शिक्षाएँ

1. कालिम–ए–तय्यिवाह – इसमें कहा गया खुदा एक है, हजरत मुहम्मद, खुदा का पैगम्बर है। कुरआन, आकाश से उतरी पुस्तक है।
2. नमाज – दिन में 5 बार खुदा की सेवा में उपस्थित होकर अपनी जबान से क्रियात्मक रूप से उन बातों को दोहराना जिन पर ईमान (विश्वास) लाया जाये।
3. रोजा (उपवास) – साल में एक महीना रमजान है। पूरा माह रोजा रखना अनिवार्य है। 'सहरी' के समय कुछ खा लिया जाता है फिर सारा दिन पानी की एक बूंद तक नहीं ली जाती। शाम ढलते ही रोजा 'इफ्तार' किया जाता है।
4. जकात – इस्लाम का अनिवार्य अंग है। यह एक ऐसी सहायता है जो धनवानों की ओर से निर्धनों के लिए की जाती है। यह संपत्ति का 40वाँ हिस्सा होती है, जो मनुष्य को लोभी होने से बचाती है।
5. हज – जीवन में एक बार हज करना अनिवार्य है। इसके पीछे मूल भावना यह है कि पूरी एक परिक्रमा से मनुष्य अपने मन को शुद्ध कर लेता है।
6. ज़िहाद – इसका अर्थ लूटमार करना नहीं और न ही अकारण किसी से युद्ध करना है बल्कि किसी कार्य में अपनी संपूर्ण शक्ति को लगा देने का नाम 'जिहाद' है। इन अनिवार्य शिक्षाओं के अलावा इस्लाम में दो अन्य शिक्षायें भी जरूरी हैं :–
    1. आखरेत – अर्थात् मनुष्य के मृत्यु पश्चात् कयामत के दिनों में उसके अच्छे–बुरे कार्यों के हिसाब से जन्नत या दोज़ख (नर्क) में रखा जायेगा।
    2. शरीयत – खुदा ने अपने पैगम्बर हजरत मुहम्मद द्वारा इबादत के तरीके, सामाजिक सिद्धांत के कानून, हलाल, हराम (अवर्जित, वर्जित) की जो सीमायें रखी हैं, वही शरीयत कहलाती हैं।[11] इनके अलावा इस्लाम में खुदा का डर, पवित्र जीवन, सच्चाई पर जोर दिया। कुरआन शरीफ और हदीस पढ़ते रहना, पापों से क्षमा मांगते रहना आदि भी इस्लाम की प्रमुख शिक्षायें हैं।

इस्लाम धर्म में नारी की स्थिति

इस्लाम एक निराकार एकेश्वरवादी सिद्धांत है, अल्लाह सर्वशक्तिशाली है। अल्लाह के पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहब ने 7वीं शताब्दी में अरब देश में इस्लाम धर्म की नींव रखी। इस्लामिक शिक्षायें पवित्र पुस्तक 'कुरआन–शरीफ' में संकलित हैं। इसमें माता को बहुत महत्व दिया गया। हजरत साहब ने कहा कि "माता के चरणों में जन्नत है।" आमतौर पर उनकी शिक्षाओं में पुरुष व नारी के लिए अलग विधान नहीं है। रोजा, हज व नमाज नर–नारी दोनों के लिए समान विधान है। यदि पुरुष पांच वक्त की नमाज पढ़ता है, तब नारी के लिए भी पांच वक्त की नमाज़ जायज है। अतः नारियाँ भी कुरान पढ़ने योग्य थीं और शिक्षा प्राप्त करती थीं। अध्ययन के लिए उन पर कोई रोक नहीं थी पर शिक्षा घर पर ही उस्ताद या उस्तादनी आ कर देते थे। उनके लिए अलग मकतब या स्कूल नहीं था।[12]

पवित्र ग्रंथ 'कुरआन' में शिक्षा के लिए नर व नारी दोनों को बराबरी का दर्जा दिया गया। हजरत मुहम्मद ने स्वयं भी नारियों के साथ आदरपूर्वक व्यवहार किया। वे महिलाओं की कठिनाइयां समझते थे। उन्होंने अरब देशों में महिलाओं को अपमानित होते देखा। मुहम्मद सुलेमान साबिर ने अपने ग्रंथ 'इस्लाम और औरत' में लिखा है– "मुहम्मद साहब ने अपने अनुयायियों को शिक्षा दी कि वे महिलाओं के साथ बेअदबी न करें और न ही बुरा सलूक करें।" जब महिलाएं उनके दर्शन के लिए जातीं तो वे खड़े होकर उनके प्रति अपना सम्मान प्रकट करते थे। उनकी मृत्यु पश्चात् ही अरब समाज में महिलाओं से भेदभाव शुरू हुआ। उन्होंने 'कुरआन' की आयतों की अलग ढंग से व्याख्या शुरू की। परिवार पितृसत्तात्मक हो गया और महिलाओं का हक नष्ट कर दिया गया।[13]

महिलाओं को यह हक अवश्य था कि वे अपने शौहर को तलाक दे सकें। तलाकशुदा महिला के साथ बुरा सुलूक नहीं किया जाता था। 'मेहर' की रकम उन्हें वापस कर दी जाती थी। महिलाओं के उत्तराधिकार के हक में भी मुल्ला उनके अधिकारों में परिवर्तन नहीं कर सके। भारत में उन्होंने देखा कि हिन्दू महिलाएं अधिकार विहीन हैं अतः धीरे–धीरे मुस्लिम महिलाओं की भी वही स्थिति बन गयी। पुरुष चार से ज्यादा विवाह करता था, महिलायें बहुविवाह का दंश झेलती थीं। मुस्लिम कानून में विवाह समझौता माना गया, संस्कार नहीं। मुस्लिम महिला पुनर्विवाह कर सकती थी पर बच्चों वाली माँ होने पर वे विवाह सफल नहीं थे।[14] वे पिता की सम्पति में अपना हक अवश्य मांगतीं पर उन्हें प्राप्त नहीं होता, दूसरे पति की भी दुर्भावना को सहती।

भारत में मुस्लिम महिलाओं का पर्दा पहले से कठोर हो गया। मकान के पिछले भाग में जनानखाना होता था, उन्हें वहीं रहना होता था। जनानखाने में उनकी हैसियत कैदी जैसी होती थी। तीज–त्योहारों में भी पर्दा करना होता था। कभी–कभी वे पर्दे के पीछे से ईद मुबारक कह देती थीं। वे अशिक्षा व अज्ञान में जकड़ी थीं। मुस्लिम समाज में बाल–विवाह और दहेज की प्रथा शुरू हो गई (हिंदुओं के प्रभाव से)। आश्चर्य है कि उनमें भी जाति प्रथा आ गई और इस्लाम द्वारा सुनिश्चित लोकतांत्रिक परम्पराएँ समाप्त हो गईं। बहुत संतान पैदा करने से वे शीघ्र बूढ़ी और बीमार हो जातीं, अतः दूसरे, तीसरे विवाह होने लगे। परंतु परिवार में माता का आदर था।[15] 'बाबरनामा' में बाबर ने अपनी माँ की मृत्यु होने पर लिखा, "चालीसवें दिन शोक मनाने लोग एकत्रित हुए और मरे हुए की आत्मा की शांति के लिए गरीबों को खाना बांटा व कुरआन शरीफ का पाठ किया। मां के मरने का मेरे ऊपर बहुत प्रभाव पड़ा।"[16]

मुहम्मद साहब का स्पष्ट आदेश था, सबसे बुजुर्ग महिला घर की 'मुखिया' होती है। इनका सम्मान करो। इस्लाम जहां भी गया वहां की परिस्थितियों व परम्पराओं से प्रभावित हुआ। मुहम्मद साहब का आदेश था कि महिलाओं के साथ जबरदस्ती न की जाये परंतु कभी–कभी कर्ज अदायगी न करने पर बेटी को बेचने की मजबूरी भी भोगनी पड़ती थी।[17]

महिलाओं की स्थिति को दायित्वपूर्ण बताते हुए नफीसा अख्तर फारूखी (पुस्तक–इस्लाम में स्त्री–पुरुष समानता) ने लिखा, "महिलायें अपने खून से इंसानियत की खेती को सींचती हैं और अपने सीने की नहरों से सैलाब बनाती हैं। वे अपने सुख और अपनी खुशी को आने वाले नस्ल पर बलिदान कर देती हैं।"

इस्लाम में पवित्र कुरआन में कहा गया कि दो औरतों की गवाही एक पुरुष के बराबर है। मुस्लिम महिलाएं अशिक्षित भले ही हों पांच वक्त की नमाज व रोजा का पालन करती थीं। 'कुरुआन' में पर्दे व नमाज की हिदायत का कड़ाई से पालन करती थीं।[18] मनूची जो यात्री होने के साथ चिकित्सक भी था, उसने लिखा, "जब भी शाही हरम में इलाज के वास्ते गया तब पर्दे की ओट से महिलायें नब्ज दिखाती थीं।" मुस्लिम महिलायें पाक् कला में पारंगत होती थी, कशीदाकारी व सिलाई–बुनाई करती थीं। गावों की मुस्लिम महिलायें अधिक नियंत्रण में नहीं रहती थीं, शहर की महिलायें आंगन से डोली में बैठती थीं और दूसरे के आंगन में जाकर उतरती थीं।[19]

पारिवारिक निर्णयों में पुरुष वरिष्ठ महिला से परामर्श करता पर निर्णय स्वयं लेता था। कारोबार व जायदाद का काम पुरुष संभालते। उच्च वर्ग की महिलायें जब शिक्षित होतीं तब जायदाद का काम पर्दे के पीछे रह कर मुंशी की मदद से करती थीं।

जब अंग्रेजी शिक्षा का प्रचलन बढ़ा तो मुस्लिम महिलाऐं भी प्रभावित हुईं। अनेक महिलायें विदेश गयीं। अनेक विद्यालय व महाविद्यालय खुले। महिलाओं ने क्लब जाना शुरू किया पर इनकी संख्या कम थी। शासकीय परिवारों में महिलाओं ने साहित्य व कला में रुचि ली। रजिया सुल्तान शासिका थी पर उसके गुण व योग्यता काम नहीं आई क्योंकि वे एक महिला थीं। गुलबदन बेगम इतिहासकार थी, चाँद बीबी एक योद्धा। 1930 में मुस्लिम महिलाओं ने भी पर्दे के विरोध में आवाज उठायी। वे अखिल भारतीय महिला परिषद की सदस्य व पदाधिकारी बनीं।[20] वे साहित्य में रुचि ली व उसकी प्रगति में योगदान दिया। उर्दू पत्र–पत्रिकाओं में शायरी और समाज सुधार के पक्ष में लेख लिखे। बहुत सी उर्दू लेखिकाओं ने मर्दाना नाम रखना शुरू किया। उर्दू साहित्य को सम्पन्न बनाने में इस्मत चगताई का नाम प्रसिद्ध है।

परंतु यह प्रगति चंद विकसित महिलाओं तक ही सीमित थी। अधिकांश महिलाओं ने शिक्षित होने के बावजूद पर्दा नहीं छोड़ी। पुरुषों का भी व्यवहार उनके प्रति नहीं बदला, दहेज प्रथा आ गयी। अत्याचार हुए। बहुविवाह से आर्थिक स्थिति गिरी।[21]

सच्चाई यह है इस्लाम के आरंभिक निर्देशों को उलट–पलट कर मुस्लिम महिलाओं का जीवन बदतर बनाया गया। हिन्दू औरतों की तरह मुस्लिम औरतें भी पुरुष के अत्याचार को सहन करने को बाध्य थीं। यद्यपि शिक्षित महिलाओं ने इस दशा को सुधारना चाहा, उनकी संस्थाऐं बनीं, लखनऊ में महिलाओं के नमाज़ पढ़ने के लिए अलग मस्जिद भी बनायी गयी।

मुस्लिम परिवारों में स्त्रियों की स्थिति अधिक शोचनीय थी। उन्हें समाज में कम सम्मान था। दासियों के साथ अनुचित संबंध होने से पत्नी व दासी में अंतर नहीं रहा। बहुविवाह की प्रथा मुस्लिम समाज में आम थी। सुल्तान व सामंत वर्ग के लोगों के हरम में सैकड़ों स्त्रियां रहती थीं। पर्दे की प्रथा भी कठोर थी। फतुहात–ए–फिरोजशाही के अनुसार– "स्त्रियों का संतों की कब्रों पर जाना बंद हो गया क्योंकि वहां उनको पथ–भ्रष्ट करने के लिए अनेक चरित्रहीन पुरुष भी जाया करते थे।"[22]

इसके बावजूद हिन्दू महिलाओं की तुलना में मुस्लिम महिलाओं को सुविधायें भी मिली थीं। वे विधवा विवाह कर सकती थीं। अपने पति को कई कारणों से तलाक दे सकती थीं। अपने पिता की सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त करती थीं। उनकी शिक्षा की व्यवस्था अपेक्षाकृत अच्छी थी। शाही व सामंत परिवार की स्त्रियां अच्छे से शिक्षा ग्रहण करती थीं। कन्या जन्म से जुड़ी जो समस्यायें हिन्दू धर्म में हैं वही लगभग सिक्ख परंपरा में हैं। दान–दहेज और सुरक्षा की समस्याओं से तो शायद हर जाति और धर्म की नारी पीड़ित है।

उपसंहार

इस प्रकार स्पष्ट है कि सामाजिक कुप्रथाओं ने समाज में नारियों की स्वतंत्रता को जकड़ दिया था, जिससे भारतीय समाज में गति हीनता आ गयी। इसके बाद में अनेक नारियों ने रूढ़िवादी परम्परा का विरोध कर सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त की, परंतु ये सभी स्त्रियां शाही

परिवार से संबंधित थी। जनसाधारण स्त्रियां समस्त अधिकारों से वंचित थी, उन्हें केवल त्याग व बलिदान का पाठ पढ़ाया जाता था। साथ ही एक ऐसा वर्ग भी था, जो नगरों से दूर गाँवों में रहता था, उन व्यक्तियों ने अपने परिवार की स्त्रियों को परंपरागत स्थान प्रदान कर रखा था, क्योंकि जीविकोपार्जन के लिए ऐसा करना आवश्यक था। गरीब तबकों के परिवारों में स्त्रियों के लिए कोई पर्दा प्रथा नहीं थी। यह केवल नगरीय जीवन एवं शाही परिवार तक ही सीमित थी।

संदर्भ सूची

1. शर्मा, कालूराम, व्यास प्रकाश, मध्यकालीन भारत का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2004, पृ. 185.
2. नागोरी, एस.एल. मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पाइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2012, पृ. 8.
3. नागोरी, पूर्वोक्त, पृ. 146.
4. गुप्ता एण्ड शर्मा, समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, उत्तर प्रदेश, 2004, पृ. 585.
5. नागोरी, एस.एल., नागोरी, जीतेश, भारतीय संस्कृति के 21 अध्याय, यूनिवर्सिटी बुक हाउस लि., जयपुर, 2007, पृ. 34.
6. नागोरी, एस.एल., नागोरी, कान्ता, विश्व की प्राचीन सभ्यताओं का इतिहास, सबलाइम पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2004, पृ. 85.
7. कुमार, मुनेश, इस्लामिक कला एवं सस्कृति, आदि बुक्स, दिल्ली, 2013, पृ. 55.
8. महाजन, विद्याधर, मुस्लिम कालीन भारत, एस. चन्द्र एण्ड कम्पनी लि., नई दिल्ली, 2009, पृ. 11.
9. पूर्वोक्त, पृ. 13.
10. खुराना, के.एल., मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2009, पृ. 73.
11. नागोरी, एस.एल., नागोरी, जीतेश, पूर्वोक्त, पृ. 103–105.
12. आनंद, सुगम, भारतीय इतिहास में नारी, साहित्य संगम, प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007, पृ. 74–75.
13. उपरोक्त, पृ. 62.
14. उपरोक्त, पृ. 64.
15. बघेला, हतेसिंह, भारतीय संस्कृति का विकास, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2008, पृ. 68.
16. कुमार, केशव, बाबरनामा : सम्राट बाबर की आत्मकथा, साहित्यागार प्रकाशन, दिल्ली, 2005, पृ. 215.
17. सिन्हा, विपिन बिहारी, मध्यकालीन भारत, ज्ञानंदा प्रकाशन, इलाहाबाद, 2004, पृ. 84.
18. शर्मा, कालूराम, पूर्वोक्त, पृ. 185.
19. राम, कौलेश्वर, मुगलकालीन सभ्यता संस्कृति, किताब महल, इलाहाबाद, 2004, पृ. 74.
20. शर्मा, कालूराम, पूर्वोक्त, पृ. 198.
21. आनंद, सुगम, पूर्वोक्त, पृ. 52.
22. नागर, विष्णुदत्त, भारतीय चेतना और विकास, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर, 1983, पृ. 62.